पुस्तक समीक्षा – विश्वेश्वर स्मृतिः

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा
समन्वयक - पाण्डुलिपि संसाधन केन्द्र,
वैदिक हेरिटेज एवं पाण्डुलिपि शोध संस्थान, जयपुर

विश्वेश्वरस्मृति की रचना पं. विश्वेश्वरनाथ रेऊ जी ने की। इसका हिन्दी अनुवाद उनकी श्रीमती जी ने प्रस्तुत किया, जो अनुवाद टीका-कलावती के नाम से प्रसिद्ध है। श्री रेऊ जी ने इस स्मृति को अपनी धर्मपत्नी की स्मृति के रूप में विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया है, जो उनकी जीवितावस्था में प्रकाशित नहीं हो सकी थी।

श्री रेऊ जी ने स्मृति का समर्पण करते हुए लिखा है-

कलावत्या यया यत् स्वभाषया भूषितं स्मृतेः।
पूर्वार्धं, तत्स्मृतावेव सानुरागः तदर्प्यते ।।

इस स्मृति को दो भागों में विभाजित किया गया है-पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध। विश्वेश्वरस्मृति का उत्तरार्द्ध 'आर्य-विधानम्' है। वैसे 'आर्य-विधानम् अपने आप में एक स्वतंत्र ग्रन्थ है। विश्वेश्वरस्मृति के पहले भाग में युगधर्म की चर्चा की गयी है। अब प्रश्न यह उठता है मनु-याज्ञवल्क्य- पाराशर-देवल आदि अनेक स्मृतियाँ पहले से ही विद्यमान थीं, फिर इस नवीन स्मृति की रचना का क्या प्रयोजन? इसके जवाब में रेऊ जी का कहना है, कि आर्यावर्त अब परिवर्तित हो गया है—बिजली, रेडियो, दूरदर्शन से आर्यावर्त की सीमाएँ इतनी बढ़ गयी हैं और भारत में इतनी नई जातियाँ आ गयी हैं, अनेक लोग विदेश में जाकर बस गए हैं—इस नयी व्यवस्था पर मनुस्मृति लागू नहीं की जा सकती। फिर भी यह स्मृति एकदम नवीन नहीं है— मनुस्मृति का नवीनीकरण है—देशकाल के अनुसार इसका यह नया रूप है। इस स्मृति में मनुस्मृति के समान ही बारह अधिकार हैं।

प्रथम अधिकार में सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में पौराणिक मतों के साथ ही नवीन वैज्ञानिक मत भी प्रस्तुत किये गये हैं। सृष्टि क्रम का वर्णन करते हुए पं. रेउँ जी ने लिखा है कि ब्रह्माण्डरूपी समुद्र में उत्तम नीहारिका के रूप में कुण्डलियों द्वारा समस्त स्थान को व्याप्त कर सब तरफ शेषनाग शोभित था। वहाँ नारायण सोये हुए थे। भगवान् के 'एकोऽहं बहु स्याम्' की कल्पना से उस नीहारिका में चक्र की सी गति हो गई। उससे बानवे तत्त्व उत्पन्न हुए।

मनुष्यों की उत्पत्ति के स्थान पर रेऊ जी ने कहा है कि यह स्थान जम्बूद्वीप हो सकता है। रेऊ जी ने चारों युगों पर भी इस अध्याय में अपने विचार प्रकट किये हैं।

द्वितीय अधिकार में रेऊ जीने धर्म की व्याख्या की है। इस अधिकार में रेऊ जी संस्कारों की सम्पन्नता पर विशेष रूप से जोर देते हैं। अनध्याय के सम्बन्ध में भी रेऊ जी ने अपने विचार प्रकट किये हैं, जो आधुनिकयुगीन हैं। तृतीय अधिकार में रेऊ जी ने गृहस्थ धर्म का विवेचन करते हुए विवाह संस्कार के विषय में अपने पूर्णतः सुलझे हुए विचार रखे हैं।

पंचमहायज्ञों के सम्बन्ध में रेऊ जी ने कहा है कि पंच महायज्ञों का अनुष्ठान प्रत्येक गृहस्थ के लिए अनिवार्य होकर अपनी सामर्थ्य के अनुसार होना चाहिए। चतुर्थ अधिकारमें गृहस्थ के कर्त्तव्यों का विवेचन किया गया है। स्पर्शास्पर्श के विषय में भी रेऊ जी ने अपने नवीन विचार प्रकट किये हैं, कि अछूत वे हैं जो गन्दे व मैले वस्त्र पहनते हैं या ऐसे कर्म करते हैं।

पंचम अधिकार में भक्ष्याभक्ष्य के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया है। जन्माशौच एवं मरणाशौच एवं शुद्धि के सम्बन्ध में रेऊ जी अन्य स्मृतिकारों का समर्थन करते हैं। 'स्त्री - धर्म' भी इसी अधिकार के अन्तर्गत आता है। षष्ठ अधिकार में वानप्रस्थी के धर्म का उल्लेख किया गया है तथा इसी प्रकरण संन्यासियों के धर्मों का भी विवेचन प्राप्त होता है।

सप्तम अधिकार में राजधर्म एवं उनके कर्त्तव्यों की विशेष रूप से चर्चा की गयी है। उनका कहना है कि वही राजा विजय प्राप्त कर सकता है, जिसके पास भिन्न-भिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र विद्यमान रहते हों। अष्टम अधिकार में व्यवहार का उल्लेख किया गया है। रेऊ जी का कहना है कि राजा से तात्पर्य 'न्यायाधीश' से होताहै।

नवम अधिकार में गृहस्थ एवं राजाओं के कृत्य बतलाये गये हैं। सर्वप्रथम स्त्रियों की रक्षा के लिए जोर दिया गया है। रेऊ जी पुनर्विवाह पर जोर देते हैं। रेऊ जी ने अन्य महर्षियों की भाँति 12 प्रकार के पुत्रों का उल्लेख किया है।

दशम अधिकार में चारों वर्णों के अनुष्ठेय कर्मों का वर्णन है। एकादश अधिकार में प्रायश्चित्त का विधान है। पश्चात्ताप ही सबसे बड़ा प्रायश्चित्त है। अत: सभी मनुष्यों को यह प्रयत्न करना चाहिए कि वह अपना कार्य नियमित करे।

द्वादश अधिकार में कर्मों के प्रकार निर्दिष्ट हैं। प्रत्येक व्यक्ति को उत्तम कार्य करने चाहिए, ताकि लोक में पूज्य एवं विख्यात रहे।

इस स्मृति के प्रत्येक अधिकार के अन्त में एक पद्य मिलता है, जो श्री हर्ष की परम्परा का पोषण करता है। इससे यह पता चलता है कि रेऊ जी के पिता का नाम श्रीमुकुन्दमुरारि था तथा माता का नाम श्रीमती चांदरानी था।

आधुनिक धर्मों का विश्लेषण करने वाली यह स्मृति वास्तव में परम उपयोगी है। समय क्रम से आने वाली अनेक स्मृतियों के मिलने से जाना जाता है कि पुराने आचार्यों ने धर्म की रक्षा के लिए, समयानुसार धर्म की जो व्याख्या की, समय-समय पर ऋषियों के नाम से अनेक स्मृतियां बनायी थीं। रेऊजी का कहना है कि "उसी परम्परा को लेकर मेरा भी यह थोड़ा सा प्रयत्न है। बिना किसी सन्देह के इसकी आधुनिकता प्रकट करने के लिए ही इसका नाम विश्वेश्वर स्मृति रखा गया है।"

विश्वेश्वरस्मृति में करीब तेरह सौ अनुष्टुप् छन्द है।

विश्वेश्वरस्मृति के अन्त में एक पद्य मिलता है, जिसके द्वारा विश्वेश्वरस्मृति के रचनाकाल का पता चलता है-

षडंकांकधरोक्तेऽब्दे विक्रमार्कस्य निर्मिता।
विश्वेश्वरस्मृतिरियं लोककल्याणकाम्यया ।।

विक्रम संवत् 1996 अर्थात् 1939 ई. में लोगों के ही इस विश्वेश्वर स्मृति की रचना की गयी।